Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

12 वीं शताब्दी से 19 वीं शताब्दी के मध्य के प्रमुख युद्ध और भारत की ऐतिहासिक दशा का पुर्ननिर्धारण

डॉ. आकाश ताहिर*

* सहा. प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) पी.एम.सी.ओ.ई. शास. कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारत का इतिहास केवल राजवंशों और शासन-परिवर्तन की कथा नहीं है, बल्कि यह निरंतर संघर्ष, युद्ध और प्रतिरोध की भी गाथा है। भारत का इतिहास युद्धों, संधियों और सत्ता-संघर्षों की निरंतर प्रक्रिया से निर्मित हुआ है। प्राचीन काल से लेकर सन् 1947 ई. तक भारत में हुए युद्धों ने न केवल सत्ता परिवर्तन किए, बल्कि सामाजिक संरचना, आर्थिक नीति, सैन्य संगठन और राष्ट्रीय चेतना को भी गहराई से प्रभावित किया। इस शोध-पत्र में तराइन के युद्धों से लेकर सन् 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम तक के प्रमुख युद्धों का विश्लेषण किया गया है। यह शोध-पत्र भारत की स्वतंत्रता से पूर्व हुए उन प्रमुख युद्धों का विश्लेषण करता है, जिन्होंने भारत की ऐतिहासिक दिशा को निर्णायक रूप से परिवर्तित किया और अंतत: औपनिवेशिक शासन के विरूद्ध राष्ट्रीय आंदोलन की नींव रखी।

युद्ध और ऐतिहासिक दिशा : एक सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य – इतिहासकारों के अनुसार युद्ध सामाजिक परिवर्तन के सबसे शक्तिशाली कारको में से एक होते हैं। भारत के संदर्भ में युद्धों ने केवल राजनीतिक सत्ता नहीं बदली, बल्कि भूमि-व्यवस्था, कर-प्रणाली, सैन्य संरचना और सांस्कृतिक वर्चस्व को भी पुनर्परिभाषित किया। इतिहास में युद्ध केवल भौतिक संघर्ष नहीं होते, बल्कि वे सभ्यताओं की दिशा निर्धारित करने वाले कारक होते हैं। भारत में युद्धों ने प्रशासनिक संरचना, भूमि-राजस्व व्यवस्था, सैन्य संगठन तथा वैचारिक वर्चस्व को प्रभावित किया। औपनिवेशिक काल में युद्धों ने भारत को एक संप्रभु शक्ति से एक उपनिवेश में परिवर्तित किया, वहीं इन्हीं युद्धों ने आगे चलकर स्वतंत्रता की चेतना भी उत्पन्न की।[1]

तराइन का प्रथम एवं द्वितीय युद्ध (1191-1192 ई.) – 12 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पृथ्वीराज चौहान अजमेर और दिल्ली के शक्तिशाली शासक थे जबकि मुहम्मद गोरी गजनी और घोर का शासक था। मुहम्मद गोरी ने उत्तर भारत में अपने साम्राज्य के विस्तार हेतु सन् 1191 ई. में आक्रमण किया। तराइन (आधुनिक हरियाणा) के मैदान में लड़े गए इस युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की सेना में राजपूत घुड़सवार, हाथी-दल और पैदल सैनिक थे। पृथ्वीराज ने व्यक्तिगत वीरता और पारंपरिक युद्ध पद्धति के बल पर गोरी को पराजित किया। गोरी घायल होकर बंदी बना लिया गया। परंतु पृथ्वीराज ने गोरी को जीवित छोड़ दिया। किंतु गोरी को जीवित छोड़ देना एक ऐतिहासिक भूल सिद्ध हुई। राजपूतों की विजय के बावजूद यह अस्थायी सिद्ध हुई, क्योंकि गोरी पुन: आक्रमण की तैयारी में जुट गया।

1192 ई. में गोरी ने संगठित तुर्की घुड़सवार सेना, धनुर्धारी और तेज़ आक्रमण की रणनीति अपनाई। राजपूत सेना की पारंपरिक युद्ध शैली इस रणनीति के सामने टिक नहीं सकी। पृथ्वीराज चौहान पराजित हुए और बंदी बना लिए गए। अबकी बार मोहम्मद गोरी ने पृथ्वीराज चौहान को जीवनदान नहीं दिया बल्कि पृथ्वीराज चौहान का वध कर दिया। तराइन के युद्धों ने उत्तर भारत की राजनीतिक दिशा को निर्णायक रूप से बदल दिया। पृथ्वीराज चौहान की पराजय के बाद दिल्ली सल्तनत की स्थापना संभव हुई। इससे भारत में एक नई प्रशासनिक और सैन्य संस्कृति का प्रवेश हुआ।

इस पराजय के बाद दिल्ली और अजमेर पर तुर्कों का अधिकार हो गया और भारत में दिल्ली सल्तनत की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हो गया। इन युद्धों के बाद कोई औपचारिक संधि नहीं हुई। यह पूर्ण सैन्य विजय थी। यह युद्ध भारत में दिल्ली सल्तनत की स्थापना का आधार बना।[2]

पानीपत का प्रथम युद्ध (1526 ई.) – दिल्ली सल्तनत के अंतिम शासक इब्राहिम लोदी की नीतियों और अत्याचारी शासन से असंतुष्ट अफग़ान सरदारों ने बाबर को भारत आने का आमंत्रण दिया। 21 अप्रेल 1526 ई. को पानीपत के मैदान में बाबर और इब्राहिम लोदी की सेनाएँ आमने-सामने हुईं। पानीपत के युद्ध में बाबर की विजय ने भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना की। बारूद और तोपों के प्रयोग ने भारतीय युद्ध-पद्धति को आधुनिक बनाया और सामंती सेनाओं की कमजोरी उजागर की। बाबर ने इब्राहिम लोदी के विरूद्ध तोपखाने, बंदूकों और 'तुलुग़मा' और 'अरबा' युद्ध नीति का प्रयोग किया, जबकि लोदी की सेना पारंपरिक ढंग से लड़ी। लोदी की विशाल सेना भ्रमित हो गई। लोदी की विशाल सेना आधुनिक हथियारों के अभाव में पराजित हुई। यह युद्ध भारत में बारूद युग का आरंभ माना जाता है। यह निर्णायक युद्ध था, अत: कोई संधि नहीं हुई। इब्राहित लोदी की मृत्यु के साथ दिल्ली सल्तनत समाप्त हुई और मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई।[3]

खानवा का युद्ध (सन् 1527 ई.) – राणा सांगा ने बाबर के विरूद्ध राजपूत संघ का नेतृत्व किया। बाबर ने धार्मिक प्रेरणा और तोपखाने का प्रयोग किया। खानवा के युद्ध में राजपूत वीरता के बावजूद बाबर विजयी रहा। उत्तर भारत में मुगल सत्ता सुदृढ़ हो गई।[4]

हल्दीघाटी का युद्ध (1576 ई.) – अकबर की साम्राज्यवादी नीति के

विरूद्ध महाराणा प्रताप ने मुगल अधीनता स्वीकार करने से इंकार कर दिया। 18 जून 1576 ई. को हल्दीघाटी में महाराणा प्रताप और मुगल सेनापति मानसिंह के बीच युद्ध हुआ। युद्ध अत्यंत भीषण था। युद्ध में महाराणा प्रताप घायल हुए, किन्तु उन्होंने आत्मसमर्पण नहीं किया। प्रताव घायल हुए परंतु बंदी नहीं बने। महाराणा प्रताप के घोड़े चेतक की वीरता प्रसिद्ध है। महाराणा प्रताप युद्धभूमि से सुरक्षित निकल गए। मेवाड़ का पहाड़ी क्षेत्र मुगलों के लिए पूर्णत: नियंत्रित नहीं हो सका। युद्ध के पश्चात कोई संधि नहीं हुई। हल्दीघाटी का युद्ध भारतीय इतिहास में आत्मसम्मान और स्वाधीनता का प्रतीक है। मुगल मेवाड़ पर पूर्ण नियंत्रण नहीं कर सके। महाराणा प्रताप ने गुरिल्ला युद्ध नीति मेवाड़ के अधिकांश क्षेत्र पुन: प्राप्त कर लिए। महाराणा प्रताप ने मुगल अधीनता को स्वीकार न कर भारतीय प्रतिरोध की परंपरा को जीवित रखा। महाराणा प्रताप ने जीवनभर मुगल अधीनता स्वीकार नहीं की।[5]

प्लासी का युद्ध (1757 ई.) – ईस्ट इंडिया कंपनी और बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला के बीच व्यापारिक और राजनीतिक तनाव बढ़ रहा था। 23 जून 1757 ई. को प्लासी में युद्ध हुआ। मीर जाफर, राय दुर्लभ और जगत सेठ की गद्दारी के कारण नवाब की सेना निश्क्रिय रही। प्लासी का युद्ध भारत में औपनिवेशिक शासन का वास्तविक प्रारंभ था। इस युद्ध में सैन्य शक्ति से अधिक राजनीतिक षड़यंत्र और विश्वासघात निर्णायक सिद्ध हुए। सिराजुद्दौला की पराजय के बाद मीर जाफर को नवाब बनाया गया और कंपनी को अपार आर्थिक लाभ मिला। ब्रिटिश सेना संख्यात्मक रूप से कमजोर होते हुए भी विजयी रही। युद्ध के बाद कंपनी और मीर जाफर के बीच समझौता हुआ, जिससे कंपनी को राजनीतिक शक्ति मिली।[6]

बक्सर का युद्ध (1764 ई.) – मीर कासिम की नीतियों से असंतुष्ट कंपनी और भारतीय शासकों के बीच टकराव हुआ। 22 अक्टूबर सन् 1764 ई. में बक्सर में मीर कासिम, शुजाउद्दौला और मुगल सम्राट शाह आलम द्वितीय की संयुक्त सेना कंपनी से पराजित हुई। इस युद्ध ने कंपनी को वास्तविक सत्ता प्रदान की। बक्सर के युद्ध ने ईस्ट इंडिया कंपनी को बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी दिलाई। यह युद्ध भारत में ब्रिटिश प्रशासनिक शासन की नींव बना। युद्ध के पश्चात सन् 1765 ई. में इलाहाबाद की संधि हुई, इस संधि के अंतर्गत कंपनी को बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी मिली। कंपनी भारत की वास्तविक राजनीतिक शक्ति बन गई।[7]

मैसूर युद्ध (1767–1799 ई.) और टीपू सुल्तान – प्रथम मैसूर युद्ध 1767–1769 ई. इस युद्ध में हैदर अली ने अंग्रेजों, निज़ाम और मराठों की संयुक्त शक्ति को पराजित किया। सन् 1769 ई. में मद्रास के निकट हैदर अली की सेना पहुँच गई। अंग्रेजों को मद्रास की संधि 1769 करना पड़ा। दोनों पक्षों ने एक-दूसरे की रक्षा करने का वचन दिया।

द्वितीय मैसूर युद्ध 1780–1784 ई. हैदर अली और बाद में टीपू सुल्तान ने अंग्रेजों को कई मोर्चों पर हराया। यह युद्ध दक्षिण भारत में अंग्रेजों के लिए अत्यंत संकटपूर्ण सिद्ध हुआ। युद्ध के बाद मंगलौर की संधि 1784 ई. की गई जिसमें दोनों पक्षों ने जीते हुए क्षेत्र वापस किए।

तृतीय मैसूर युद्ध 1790–1792 ई. लॉर्ड कार्नवालिस के नेतृत्व में अंग्रेजों ने मैसूर को घेर लिया। श्रीरंगपट्टनम की संधि 1792 ई. में टीपू को आधा राज्य छोड़ना पड़ा, 3 करोड़ रूपये का हर्जाना देना पड़ा और दो पुत्रों को बंधक बनाना पड़ा।

चतुर्थ मैसूर युद्ध 1799 ई. टीपू सुल्तान फ्रांस से संपर्क के कारण अंग्रेजों की दृष्टि में खतरा बन गए। 4 मई 1799 ई. को श्रीरंगपट्टनम की लड़ाई में टीपू सुल्तान वीरगति को प्राप्त हुए।

टीपू सुल्तान ने आधुनिक सेना और फ्रांसीसी सहायता से अंग्रेजों को चुनौती दी। उनका शासन भारतीय सैन्य आधुनिकीकरण का प्रारंभिक उदाहरण है। टीपू सुल्तान भारतीय इतिहास के पहले शासकों में थे जिन्होंने रॉकेट तकनीक, राज्य नियंत्रित उद्योग और विदेश नीति का प्रयोग किया।[8]

मराठा-ब्रिटिश युद्ध (1775–1818 ई.) – प्रथम मराठा युद्ध (1775–1782 ई.) यह युद्ध पेशवा माधवराव की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार विवाद से उत्पन्न हुआ। सालबाई की संधि 1782 ई. में मराठों ने पेशवा माधवराव द्वितीय को मान्यता दी।

द्वितीय मराठा युद्ध (1803–1805 ई.) में मराठा सरदारों सिंधिया, भोंसले और अंग्रेजों के बीच युद्ध हुआ। लॉर्ड वेलेजली की सहायक संधि प्रणाली निर्णायक सिद्ध हुई। युद्ध के पश्चात बसीन की संधि 1802 हुई। जिसमें पेशवा बाजीराव द्वितीय अंग्रेजों के अधीन हो गया।

तृतीय मराठा युद्ध (1817–1818 ई.) मराठों ने अंतिम प्रयास किया, किन्तु अंग्रेजों ने पेशवा पद को समाप्त कर दिया। तीन युद्धों में मराठों की आंतरिक फूट और पेशवाओं की कमजोरी और आपसी संघर्ष उजागर हुए। 1818 ई. के बाद भारत का अधिकांश भाग अंग्रेजों के अधीन आ गया। तत्कालिन समय की सर्वाधिक शक्तिशाली साम्राज्य होने के बावजूद आपसी कलह, और अंग्रेजों की सुनियोजित कार्यप्रणाली के सामने मराठा साम्राज्य ध्वस्त हो गया। यदि मराठा शक्ति संगठित होकर मकाबला करती तब इतिहास कुछ ओर हो सकता था।[9]

अंग्रेज-सिख युद्ध (1845–1849 ई.) – महाराजा रणजीत सिंह की सन् 1839 ई. में मृत्यु के बाद पंजाब में राजनीतिक अस्थिरता फैल गई। खालसा सेना में मुदकी, फिरोजशाह और सोबराओं में अंग्रेजों से युद्ध किया। सन् 1846 में लाहौर की संधि की गई, जिसमें पंजाब पर अंग्रेजी प्रभाव स्थापित हुआ।

द्वितीय सिख युद्ध 1848–1849 ई. मुल्तान विद्रोह से आरंभ होकर यह युद्ध पूरे पंजाब में फैल गया। 1849 ई. की संधि से पंजाब को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया गया। खालसा सेना ने वीरता से युद्ध किया, बावजूद ब्रिटिश सैन्य संगठन ब्रिटिश रणनीति और राजनीति ने विजय प्राप्त की। यह भारत की अंतिम स्वतंत्र सैन्य शक्ति की पराजय थी।[10]

1857 ई. का स्वतंत्रता संग्राम – मेरठ से प्रारंभ होकर यह विद्रोह दिल्ली, अवध, झांसी और कानपुर तक फैल गया। बहादुरशाह ज़फर को प्रतीकात्मक सम्राट घोषित किया गया। 1857 ई. का विद्रोह भारत का प्रथम व्यापक राष्ट्रीय प्रतिरोध था। इस युद्ध ने औपनिवेशिक शासन की नैतिक वैधता को चुनौती दी। इतिहास में लम्बे समय के बाद इतना बढ़ा विद्रोह किया गया था जिसमें बड़ी-बड़ी रियासतें, सैनिक, और बहुसंख्यक वर्ग ने इसमें भागीदारी की थी। अंग्रेजी साम्राज्य को इतना सशक्त प्रतिरोध का पहली बार सामना करना पड़ा था। यदि यह विद्रोह सफल हो जाता तब भारत का इतिहास पूरी तरह परिवर्तित हो सकता था किन्तु अंग्रेजों ने संख्या बल में बहुत कम होने पर भी संगठित योजनाबद्ध तरीके से आधुनिक साधनों एवं परिष्कृत हथियारों और सफल कुटनीति का प्रयोग करके इतने व्यापक विद्रोह का भी दमन कर दिया। परिणामस्वरूप ब्रिटिश संसद ने सन् 1858 ई. भारत का शासन सीधे अपने हाथों में ले लिया। अंग्रेजों ने अपनी श्रेष्ठता साबित की जिसकी कीमत भारत ने 20वीं शताब्दी के मध्य तक गुलामी के

रूप में चुकाए। विद्रोह विफल हुआ, किंतु राष्ट्रीय चेतना का उदय हुआ।[11]

1857 ई. के बाद का पुनर्गठन – 1857 ई. के बाद ब्रिटिशों ने सेना और प्रशासन का पुनर्गठन किया। इससे भारतीय समाज में सांप्रदायिक और वर्गीय विभाजन गहरा हुआ। भारत की आज़ादी से पूर्व के युद्ध केवल सत्ता संघर्ष नहीं थे, बल्कि वे भारतीय चेतना, प्रतिरोध और राष्ट्रवाद के विकास की प्रक्रिया थे। प्रत्येक युद्ध और संधि ने भारत को वर्तमान राष्ट्र–राज्य की ओर अग्रसर किया।[12]

निष्कर्ष – भारत की आज़ादी से पूर्व के युद्ध केवल पराजय की गाथाएँ नहीं है। बल्कि वे प्रतिरोध, चेतना और राष्ट्र निर्माण की आधारशिला हैं। तराइन से 1857 ई. तक की युद्ध परंपरा ने भारत को आधुनिक राष्ट्र राज्य बनने की दिशा में अग्रसर किया। युद्ध विनाशक होने के साथ–साथ ऐतिहासिक परिवर्तन के वाहक बने।[13]

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. E. H. Carr, What is History, Penguin Publication, Londan, P. 87-90.
2. Satish Chandra, Medieval India: From Sultanat to the Mughals, Orient Blackswan, 2007, P. 28-35.
3. R.C. Majumdar, The Mughal Empire, Bhartiya Vidya Bhavan, Mumbai, 1974, P. 45-53.
4. Satish Chardra, Medieval India, P. 55-63.
5. G.N. Sharma, Maharana Pratap, Rajasthani Granthagar, Jodhpur, 1998, P. 115-124.
6. Bipin Chandra, India's Struggle for Independence, Penguin, New Delhi, 1989, P. 23-30.
7. P.J. Marshall, Bengal: The British Bridgehead, Cambridge University Press, 1987, P. 82-90.
8. Kate Brittlebank, Tipu Sultan's Search for Legitimacy, OUP, P. 208-220.
9. Sumit Sarkar, Modern India, Macmillan, 2009, P. 18-27.
10. Khushwant Singh, A History of the Sikhs, OUP, 2004, P. 160-175.
11. Rudrangshu Mukharjee, Awadh in Revolt, Permanent Black, 2001, P. 40-55.
12. Thomas R. Metcalf, Ideologies of the Raj, Cambridge University Press, 1995, P. 120-135.
13. Bipan Chandra at al. India Since Independence, Penguin, 2008, P. 3-10.

****